International Journal of Applied Research 2016; 2(10): 744-745

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(10): 744-745
www.allresearchjournal.com
Received: 19-08-2016
Accepted: 23-09-2016

सीमा कुमारी झा
शोध–प्रज्ञा, विश्वविद्यालय
हिन्दी–विभाग, ल.ना.मि.वि.वि.,
दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
सीमा कुमारी झा
शोध–प्रज्ञा, विश्वविद्यालय
हिन्दी–विभाग, ल.ना.मि.वि.वि.,
दरभंगा, बिहार, भारत

मैथिली एवं भोजपुरी लोकगीतों में अभिव्यक्त सामाजिक समस्याएँ

सीमा कुमारी झा

प्रस्तावना :
जनकाव्य भोजपुर का हो अथवा मिथिला का दोनों में समस्याओं से सम्बद्ध विषयों पर प्रचुर गीत प्राप्त होते हैं। आज के समाज में जो अनवरत संघर्ष चल रहा है उसका मुख्य कारण है, समय की बदली हुई परिस्थितियाँ। हमें प्राचीनता को वहीं तक सम्मान तथा स्थान देना चाहिए, जहाँ तक वह वर्तमान के निर्माण में सहयोगी सिद्ध हों। हमारे षोड्श संस्कारों की श्रेणी में मौलिक संस्कार के रूप में विवाह को माना जाता है, जिसमें सबसे प्रमुख समस्या होती है– परस्पर असमानता की। 'बेमेल विवाह' अथवा 'वृद्ध विवाह' एक ही समस्या के दो पहलू हैं। देखा जाय तो यह समस्या आज की नहीं है। प्राचीन समय से अब तक यह समस्या बनी हुई है। देव–लोक से लेकर मानव–लोक तक यह समस्या अपनी पाँव पसारे हैं, तभी तो देवों के देव महादेव भी लोकगीतों के माध्यम से 'वृद्ध वर' का उपालम्भ सहते देखे गये हैं। बूढ़ू वर के रूप में दूल्हा का होना कोई नई बात नहीं तभी तो कई लोकगीतों में चाहे वह मिथिला का हो अथवा भोजपुर का चाहे विद्यापति हों अथवा कोई और सभी लोक कवियों तथा लोक–संस्कृतियों में इन वैवाहिक असमानता को परिलक्षित किया गया। शिव–गौरी के माध्यम से विद्यापति ने अपने गीत में बड़े ही सुन्दर ढंग से कन्या के माता के हृदय का चित्रण तथा शिव–गौरी की महिमा गायी है। बूढ़े जमाई को देख कर गौरी माता मनाइन बहुत ही विह्वल हो उठती हैं, और अपनी पुत्री को लेकर भागे जाने तक की बात कह बैठती है, जिससे वह अपनी पुत्री का विवाह उस बूढ़े वर (शिव) से होने से रोक सके।
इन लोकगीतों में समाज के अन्दर स्त्रियाँ जहाँ कई जगहों पर विवश दिखती हैं, वहीं अनेक स्थानों पर वह निर्णायक भूमिका में नजर आती हैं। इन सामाजिक विषमताओं को दो क्षेत्रों में लोकगीतों के माध्यम से अवलोकन कर इनमें समानताओं को देख सकेगें।

मैथिली में :

"हम नहि आजु रहब अहि आँगन, जै बुढ़ होएत जमाए, गे माइ।।
एक तँ बइरि भेल बीध बिधाता, दोसर धिया केर बाप।।
तेसरे बइरि भेल नारद बाभन, जे बुढ़ आनल जमाए, गे माइ।।
पहिलुक बाजन डामरू तोड़ब, दोसरे तोड़ब रुंडमाल
बड़द हाँकि बरिआत बैलाएब धियालए जाएब पड़ाए, गे माई।।
धोती लोटा पतरा पोथी, सेहो सब लेबन्हि छिनाए।
जँ किछु बजता नारद बाभन, दाढ़ी धए लेब घिसिआए, गे माइ।।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइनि, दिढ़ करू अपन गेयान।।
सुभ सुभ कए सिरी गौरी बिआहू, गौरी हर एक समान, गे माइ।।" [1]

उपर्युक्त गीत में कवि विद्यापति ने जिस मनोभाव को दिखाया है, उसमें सामाजिक असमानताओं के साथ–साथ स्त्रियों की विवशता तथा सशक्त मानसिकता दोनों का ही परिचय मिलता है। बिल्कुल उसी मनोभाव का दर्शन भोजपुरी के लोकगीतों में भी पाया गया, जहाँ भगवान शंकर बसहा पर चढ़े हुए, गले में सर्प लिपटाये और डमरू बजाते हुए बरात लेकर गौरा से विवाह करने आये। भूत–पिशाच उनकी बाराती में सम्मिलित थे। शंकर के गाल पिचके हुए थे तथा उनके मुँह में दाँत नदारद थे वे कमर में सिर्फ एक लंगोटी पहने हुए थे। ऐसे बूढ़े और अद्भुत दुल्हे को देखकर स्त्रियाँ दुल्हा खोजने वाले को भला–बुरा कहती है। गौरी की माँ दुल्हे को देखकर रोने–धोने लगती है तो उन्हें समझाया जाता है कि घबराओ मत, लगता है प्रभु का यही इच्छा है–

भोजपुरी में–

"चलु सखि देखन सिव बरियातिया हे, देखतहिं बूढ़बर फोट छतिया हे।।
बसहा बएल पर बाघ के चमड़वा हे, ताहि पर चढ़ल आवे गउरी के बरवा हे।।
गाल दूनू चटकल मुँहे टूटल दंतवा हे, हँसहुँ के लूर नाहिं नीको ना सुरतिया हे।।
बर खोजवइया के फूटल रहे अँखिया हे, ताहिं से अइसन बूढ़ ले अइले मँड़वा हे।।
लट धूनी धूनी रोवे गउरी के मइया हे, चुप करवावत सब, सखि समुझइया हे।।
जनि रोवऽ जानि कानऽ गउरी के मइया हे, अइसन विधाता के उलटी करतुतिया हे।।" [2]

बेमेल विवाह का स्वरूप जैसा कोकिल कवि विद्यापति ने अपने गीतों में उकेरा है वह हमारे समाज तथा समाज में स्त्री की मनःस्थिति को स्पष्ट रूप से उजागर करती है–

मैथिली में–

"पिया मोरा बालक हम तरूनी। कोन तप चूकि भेलहुँ जननी।।
पहिरि लेले सखि दछिनक चीर। पिया के दे खैत मोर दगध सरीर।।
पिया लेल गोद कए चलिल बाजार। हटिआक लोक पूछ के लागु तोहार।।
नहि मोर दिओर कि नहि छोट भाइ। पुरव लिखल छल बालमु हमार।।
बाट रे बटोहिया कि तुहु मोर भाइ। हमरो समाद नैहर लेने जाइ।।
कहिहुन बाबा के किनए धेनु गाइ। दुधवा पिआइके पोसता जमाइ।।
नहि मोरा टाका अछि नहि धेनु गाइ। कोन विधि पोसब बालक जमाइ।।
भनइ विद्यापति सुनु ब्रजनारि। धैरज धए रहु मिलत मुरारि।।" [3]

कुछ इसी प्रकार का भाव भोजपुरी लोकगीतों में भी देखने को मिलता है। विवाह करने के लिए आया दुल्हा, दुल्हन से उम्र में छोटा है। बारात आने पर परिवार की स्त्रियाँ दुल्हें को देखकर इस बात की शिकायत करने लगती हैं। दुल्हन इस बात को सुन कर खिन्न हो उठती है। उसके पिता और चाचा उसे समझाते हुए कहते हैं– बेटी अगर तुम मेरे कुल की प्रतिष्ठा को सुरक्षित रखोगी और कुछ धैर्य धारण करोगी, तो दुल्हा जो अभी छोटा है, कुछ ही दिनों में बड़ा हो जायेगा। फिर तुम्हें कोई शिकायत नहीं रहेगी।

आखिर समाज में ये विषमताएँ क्यों होती हैं? इस विषय पर जितना विमर्श आवश्यक है उतना ही यह बात भी चिन्तनीय है कि लोकगीतों के माध्यम से जनसामान्य विशेषकर स्त्री जातियाँ अपने और समाज की पीड़ा को अविरल अभिव्यक्त करती आयी हैं और यह परपरा हमारे संस्कतियों के अभिन्न अंग है। सामाजिक परिवेश चाहे जो हो. क्षेत्रीय विषमता के बावजूद भावाभिव्यक्ति की समता ही हमारे लोकगीतों की ताकत एवं सौन्दर्य है। तभी तो मिथिला के उपर्युक्त गीतों के भावो को हम समान रूप से भोजपुरी के लोकगीतों में भी देख सकते हैं–

भोजपुरी में :

"छोटी चूके सीता सरब गुन आगर, लीपेली धरम दुआर हे।
धरम दुआर सीता लिपहिं ना पावेल, दुअरा आवेला बरियात हे।।
अम्माँ के चेरिया हो लहरा लगावेली, सीता के बर अइले छोट हे।
एतना बचन जब सूनेली सीता, सीता केवरवा धइले ठाढ़ हे।।
हरिस उखाड़ेली कलसा ढरकावेली. केहिए खोजले बर छोट है।
मड़वा के बाँस धइले बोलले कवन बाबा, बेटी से मिनती हमार है।।
छोटहिं से बड़ होइहें ए बेटी, जाइ कुल रखबू हमार हे।
एतना बचन जब सूने राजा रामचंदर, डपटि के बोले एक बात है।
राउर धिया ससुर राउर घरे बाढ़स, हम करबो दोसर बिआह हे।।" [4]

अतः स्पष्ट रूप से यह देखा और समझा जा सकता है कि लोकगीत का संबंध आम। जन से रहा है। आमजन किसी भी सामाजिक समस्या को सबसे अधिक भोगता और उसके प्रभाव से प्रभावित होता है और इसी कारण वह अपनी भावों की तथा अभिव्यक्ति की सशक्त माध्यम ढूँढ़ती है और वह लोकगीतों के माध्यम से अपना दुःख, अपनी पीड़ा, अपनी खुशी सभी भावों और संवेदनाओं को अभिव्यक्त करता है। यही वजह है कि वह सामाजिक समस्याओं की अभिव्यक्ति तथा उसका हल भी लोकगीतों के माध्यम से तलाशता है। लोक की सर्वहितकारिणी भावना को वातावरण एवं परिस्थितियों के अनुरूप ढालकर जनमानस के बीच लोकहित के संदेश को पहुँचाना भी लोकगीतों का लोकधर्म है। ये लोकगीत निश्चित रूप से किसी भी क्षेत्र, किसी भी समाज की अमूल्य निधि है, जिनका पोषण एवं संवर्धन के साथ ही आने वाले नस्लों में इसका हस्तांतरण हमारा दायित्व है।

संदर्भ :

1. बेनीपुरी, रामवृक्ष : विद्यापति पदावली, 151/235
2. तिवारी, हंसकुमार एवं शर्मा, राधावल्लभ : भोजपुरी संस्कार–गीत, 340/237
3. तिवारी, हंसकुमार एवं शर्मा, राधावल्लभ : भोजपुरी संस्कार–गीत, 285/159
4. बेनीपुरी, रामवृक्ष : विद्यापतिय 159/263